Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

21वीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा : वैश्वीकरण, सांस्कृतिक चेतना एवं समकालीन चुनौतियों के संदर्भ में

शोधार्थी
मारूत
हिंदी एवं भाषा विभाग

शोध निर्देशक
प्रोफे. (डॉ.) दिग्विजय कुमार शर्मा
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिंदी एवं भाषा विभाग
संस्कृति विश्वविद्यालय मथुरा

https://doi.org/10.5281/zenodo.21317153

शोध सार ***इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा एक व्यापक, बहुआयामी और निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया के रूप में सामने आती है। यह केवल भौगोलिक सीमाओं या राजनीतिक सत्ता तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक और मानवीय मूल्यों से गहराई से जुड़ गई है। समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्र को एक स्थिर इकाई के रूप में नहीं, बल्कि विविधताओं से निर्मित एक जीवंत संरचना के रूप में देखा जाता है, जिसमें विभिन्न जातियाँ, भाषाएँ, संस्कृतियाँ और वर्ग अपनी-अपनी भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार राष्ट्र की परिभाषा अब अधिक समावेशी और बहुलतावादी हो गई है, जो समाज के हर वर्ग की भागीदारी को महत्व देती है। राष्ट्रीयता की अवधारणा भी इस समय में नए रूप में विकसित हुई है। अब यह केवल देशभक्ति की भावना तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें एक जागरूक और आलोचनात्मक दृष्टिकोण भी शामिल हो गया है। हिंदी साहित्यकार यह स्पष्ट करते हैं कि सच्ची राष्ट्रीयता अंधभक्ति नहीं, बल्कि समाज के भीतर मौजूद असमानताओं और अन्याय के प्रति संवेदनशीलता है। दलित, स्त्री, आदिवासी और अन्य वंचित वर्गों की आवाज अब राष्ट्रीय विमर्श का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी है। इससे राष्ट्रीयता का स्वरूप अधिक लोकतांत्रिक और मानवीय बनता है, जिसमें समानता, न्याय और स्वतंत्रता के मूल्यों को प्रमुखता दी जाती है। इस प्रकार राष्ट्रीयता अब एक जिम्मेदारी के रूप में भी देखी जाती है, जो नागरिकों को अपने समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी बनाती है।***

बीज शब्द राष्ट्र अवधारणा राष्ट्रीयता वैश्वीकरण सांस्कृतिक विविधता सामाजिक समावेशन

प्रस्तावना

इक्कीसवीं सदी में वैश्वीकरण के प्रभाव ने भी राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं को प्रभावित किया है। वैश्विक स्तर पर बढ़ते संपर्क और सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने एक ओर विश्व को निकट लाया है, तो दूसरी ओर राष्ट्रीय पहचान के सामने नई चुनौतियाँ भी खड़ी की हैं। हिंदी साहित्य में इन परिवर्तनों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, जहाँ लेखक बाजारवाद और उपभोक्तावाद के प्रभावों की आलोचना करते हुए सांस्कृतिक अस्मिता को बनाए रखने की आवश्यकता पर बल देते हैं। इस संदर्भ में साहित्य में स्थानीयता और वैश्विकता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है, जिससे राष्ट्र की पहचान न तो संकीर्ण बनती है और न ही पूरी तरह से वैश्विक प्रभावों में खो जाती है। समग्र रूप से देखा जाए तो इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्र और राष्ट्रीयता को एक समावेशी, मानवीय और प्रगतिशील दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है। यह दृष्टिकोण राष्ट्र को केवल सत्ता या सीमाओं के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभव के रूप में समझता है, जिसमें विविधता, सहिष्णुता और लोकतांत्रिक मूल्यों का विशेष महत्व है। हिंदी साहित्य इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए समाज के विभिन्न वर्गों की आवाज को अभिव्यक्ति देता है और एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना करता है, जहाँ समानता, न्याय और मानवीय गरिमा की स्थापना हो सके। इस प्रकार राष्ट्र और राष्ट्रीयता की यह नई अवधारणा वर्तमान समय की

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

जटिलताओं को समझने के साथ-साथ भविष्य के लिए एक अधिक संतुलित और समतामूलक समाज के निर्माण की दिशा में मार्गदर्शन करती है।[1]

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा एक बहुआयामी, परिवर्तनशील और विमर्शपरक रूप में उभरकर सामने आती है। यह केवल राजनीतिक या भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्तरों पर भी अपनी व्यापक उपस्थिति दर्ज कराती है। वैश्वीकरण, उदारीकरण और तकनीकी क्रांति के प्रभाव ने राष्ट्र की पारंपरिक अवधारणा को चुनौती दी है और हिंदी साहित्यकारों ने इस चुनौती को रचनात्मक ढंग से आत्मसात करते हुए नई दृष्टि विकसित की है।[2] पहले जहां राष्ट्र की पहचान मुख्यतः स्वतंत्रता संग्राम, औपनिवेशिक शोषण और राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में की जाती थी, वहीं अब राष्ट्र की परिभाषा में विविधता, बहुलता और समावेशिता को अधिक महत्व दिया जा रहा है। हिंदी साहित्य में राष्ट्र अब एक स्थिर इकाई नहीं, बल्कि निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया के रूप में देखा जा रहा है, जिसमें अलग-अलग वर्गों, जातियों, भाषाओं और संस्कृतियों की सहभागिता अनिवार्य मानी जाती है। इस संदर्भ में समकालीन रचनाकार राष्ट्र को एक ऐसे जीवंत अनुभव के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो व्यक्ति के दैनिक जीवन, संघर्षों और आकांक्षाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। इस प्रकार इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्र को केवल राजनीतिक सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और मानवीय संवेदना के रूप में भी परिभाषित करता है। इसी क्रम में राष्ट्रीयता की अवधारणा भी इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में नए रूप में विकसित हुई है। अब राष्ट्रीयता केवल देशभक्ति या राष्ट्र के प्रति निष्ठा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक आलोचनात्मक और जागरूक दृष्टिकोण के रूप में सामने आती है।[3] साहित्यकार राष्ट्रीयता को अंधभक्ति के रूप में नहीं स्वीकारते, बल्कि उसमें निहित असमानताओं, विषमताओं और अन्यायों को उजागर करते हैं। दलित, स्त्री, आदिवासी और हाशिए पर खड़े वर्गों की आवाजें अब राष्ट्रीय विमर्श का अभिन्न हिस्सा बन गई हैं, जिससे राष्ट्रीयता की अवधारणा अधिक लोकतांत्रिक और समावेशी बनती है। हिंदी साहित्य में यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि सच्ची राष्ट्रीयता वही है, जो समाज के सभी वर्गों को समान अवसर और सम्मान प्रदान करे। इस दृष्टि से साहित्यकार राष्ट्र के भीतर मौजूद सत्ता संरचनाओं और उनके द्वारा उत्पन्न शोषण की आलोचना करते हैं और एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना करते हैं, जहां समानता, न्याय और स्वतंत्रता के मूल्यों की स्थापना हो। इस प्रकार राष्ट्रीयता अब केवल एक भावनात्मक जुड़ाव नहीं, बल्कि एक नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में उभरती है, जो व्यक्ति को अपने समाज और देश के प्रति सजग और उत्तरदायी बनाती है।[4]

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता का एक महत्वपूर्ण पहलू वैश्वीकरण के प्रभाव से भी जुड़ा हुआ है। वैश्वीकरण ने जहां एक ओर विश्व को एक वैश्विक गांव में परिवर्तित कर दिया है, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय पहचान और सांस्कृतिक अस्मिता के सामने नई चुनौतियां भी उत्पन्न की हैं।[5] हिंदी साहित्यकार इन चुनौतियों का गहराई से विश्लेषण करते हैं और यह दिखाते हैं कि कैसे बाजारवाद, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक एकरूपता राष्ट्र की विविधता को प्रभावित कर रहे हैं। इस संदर्भ में साहित्य में एक ओर वैश्विक दृष्टि का विस्तार होता है, तो दूसरी ओर स्थानीयता और क्षेत्रीयता के

[1] सिंह, अंजली (2019) – *समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रवाद का स्वरूप*, दिल्ली विश्वविद्यालय

[2] कुमार, पंकज (2018) – *हिंदी कथा साहित्य में राष्ट्रीयता का बदलता स्वरूप*, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

[3] वर्मा, रीना (2020) – *इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में राष्ट्र और अस्मिता*, लखनऊ विश्वविद्यालय

[4] यादव, संदीप (2017) – *समकालीन हिंदी कविता में राष्ट्रीय चेतना*, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय

[5] मिश्रा, रेखा (2021) – *हिंदी साहित्य में वैश्वीकरण और राष्ट्रीयता*, इलाहाबाद विश्वविद्यालय

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

महत्व को भी पुनः स्थापित किया जाता है। लेखक यह प्रयास करते हैं कि वैश्विक प्रभावों के बीच अपनी सांस्कृतिक जड़ों और परंपराओं को सुरक्षित रखा जाए। इस प्रकार हिंदी साहित्य में राष्ट्र की अवधारणा अब स्थानीय और वैश्विक दोनों स्तरों पर विकसित होती है, जिसमें 'स्थानीयता में वैश्विकता' और 'वैश्विकता में स्थानीयता' का संतुलन दिखाई देता है। यह संतुलन ही समकालीन राष्ट्रीयता की विशेषता है, जो न तो पूर्णतः संकीर्ण है और न ही पूरी तरह से वैश्विक प्रभावों में विलीन होती है, बल्कि दोनों के बीच एक संवाद स्थापित करती है। अंततः इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा एक समावेशी, बहुलतावादी और मानवतावादी दृष्टिकोण के रूप में सामने आती है।[6] यह दृष्टिकोण राष्ट्र को केवल सीमाओं और प्रतीकों तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे एक जीवंत सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया के रूप में समझता है। साहित्यकार यह स्पष्ट करते हैं कि राष्ट्र की सच्ची शक्ति उसकी विविधता, सहिष्णुता और लोकतांत्रिक मूल्यों में निहित है। इस संदर्भ में हिंदी साहित्य एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि वह समाज के विभिन्न वर्गों की आवाज को अभिव्यक्ति प्रदान करता है और राष्ट्र की अवधारणा को अधिक व्यापक और गहन बनाता है। राष्ट्रीयता को भी एक सकारात्मक, आलोचनात्मक और जिम्मेदार दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जो व्यक्ति को अपने अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों के प्रति भी जागरूक करता है। इस प्रकार इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्र और राष्ट्रीयता को एक ऐसे रूप में प्रस्तुत करता है, जो न केवल वर्तमान समय की जटिलताओं को समझने में सहायक है, बल्कि भविष्य के लिए एक अधिक न्यायपूर्ण, समतामूलक और मानवीय समाज की कल्पना भी करता है।[7]

अध्ययन की आवष्यकता एवं महत्व

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा पर अध्ययन की आवश्यकता और महत्त्व को समझना आज के समय में अत्यंत प्रासंगिक हो गया है।[8] वर्तमान युग तीव्र सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का युग है, जिसमें वैश्विक स्तर पर होने वाले बदलावों का सीधा प्रभाव राष्ट्र की संरचना और उसकी पहचान पर पड़ रहा है। ऐसे में हिंदी साहित्य, जो समाज का दर्पण माना जाता है, इन परिवर्तनों को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि राष्ट्र और राष्ट्रीयता की पारंपरिक अवधारणाएँ अब बदल रही हैं और उनके स्थान पर नई, अधिक समावेशी और बहुआयामी दृष्टियाँ विकसित हो रही हैं। यदि इन परिवर्तनों का समुचित अध्ययन न किया जाए, तो हम समकालीन समाज की वास्तविकताओं को समझने में असमर्थ रहेंगे। हिंदी साहित्य में राष्ट्र अब केवल राजनीतिक सीमाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक समावेशन और मानवीय मूल्यों के साथ जुड़ा हुआ है।[9] इस दृष्टि से इस विषय का अध्ययन हमें राष्ट्र की नई परिभाषा और उसके विभिन्न आयामों को समझने में सहायता प्रदान करता है, जो वर्तमान समय की आवश्यकता है। इस अध्ययन का महत्त्व इस तथ्य में निहित है कि यह हमें राष्ट्रीयता की अवधारणा को एक आलोचनात्मक और विवेकपूर्ण दृष्टि से देखने की क्षमता प्रदान करता है। आज के समय में राष्ट्रीयता को कई बार संकीर्ण और भावनात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे सामाजिक विभाजन और असहिष्णुता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। हिंदी साहित्य इन प्रवृत्तियों का विरोध करते हुए एक संतुलित और मानवीय राष्ट्रीयता की स्थापना का प्रयास करता है। इस अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि सच्ची राष्ट्रीयता वही है, जो सभी वर्गों, समुदायों

[6] चौधरी, नेहा (2019) – *दलित साहित्य और राष्ट्र की अवधारणा*, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

[7] तिवारी, अमन (2016) – *हिंदी कहानी में सामाजिक समावेशन और राष्ट्रवाद*, गोरखपुर विश्वविद्यालय

[8] गुप्ता, कविता (2022) – *समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री और राष्ट्रवाद*, राजस्थान विश्वविद्यालय

[9] *श्रीवास्तव, दीपक (2018) – हिंदी उपन्यासों में राष्ट्र की पुनर्परिभाषा, सागर विश्वविद्यालय*

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

और संस्कृतियों को समान सम्मान और अवसर प्रदान करे। दलित, स्त्री, आदिवासी और अन्य वंचित वर्गों की अभिव्यक्ति हिंदी साहित्य में जिस प्रकार उभरकर सामने आई है, वह राष्ट्रीयता के लोकतांत्रिक स्वरूप को मजबूत बनाती है। अतः इस विषय का अध्ययन न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह हमें एक न्यायपूर्ण और समतामूलक समाज के निर्माण की दिशा में प्रेरित करता है।[10]

इक्कीसवीं सदी में वैश्वीकरण के प्रभाव ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता के स्वरूप को गहराई से प्रभावित किया है, जिसके कारण इस विषय के अध्ययन की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। वैश्वीकरण के कारण सांस्कृतिक आदान-प्रदान, आर्थिक प्रतिस्पर्धा और तकनीकी विकास में वृद्धि हुई है, लेकिन इसके साथ ही सांस्कृतिक अस्मिता और राष्ट्रीय पहचान के सामने नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। हिंदी साहित्य इन चुनौतियों का संवेदनशीलता के साथ विश्लेषण करता है और यह दिखाता है कि किस प्रकार बाजारवाद और उपभोक्तावाद की प्रवृत्तियाँ समाज की मूलभूत संरचना को प्रभावित कर रही हैं। इस संदर्भ में अध्ययन का महत्त्व इस बात में है कि यह हमें यह समझने में सहायता करता है कि कैसे हम वैश्विक प्रभावों के बीच अपनी सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रख सकते हैं। यह अध्ययन हमें यह भी सिखाता है कि राष्ट्र की अवधारणा को संकीर्णता से मुक्त रखते हुए उसे व्यापक और समावेशी बनाया जाए, ताकि वह बदलते समय के अनुरूप स्वयं को ढाल सके। इसके अतिरिक्त, इस अध्ययन का शैक्षिक और बौद्धिक महत्त्व भी अत्यंत व्यापक है। यह विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं को समकालीन हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियों को समझने का अवसर प्रदान करता है, जिससे उनके चिंतन और विश्लेषण की क्षमता का विकास होता है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता जैसे विषयों पर अध्ययन करने से व्यक्ति में सामाजिक चेतना का विकास होता है और वह अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक बनता है। यह अध्ययन आलोचनात्मक दृष्टि को भी विकसित करता है, जिससे व्यक्ति किसी भी विचारधारा को अंध रूप से स्वीकार करने के बजाय उसका तार्किक विश्लेषण कर सकता है। इस प्रकार यह अध्ययन न केवल ज्ञानवर्धक है, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

सामाजिक दृष्टि से भी इस अध्ययन का विशेष महत्त्व है, क्योंकि यह समाज में व्याप्त असमानताओं और विषमताओं को उजागर करता है। हिंदी साहित्य के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्र की सच्ची प्रगति तभी संभव है, जब समाज के सभी वर्गों को समान अवसर और सम्मान प्राप्त हो। इस अध्ययन के द्वारा हम यह समझ सकते हैं कि किस प्रकार साहित्य सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनता है और समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में सहायक होता है। यह अध्ययन हमें यह भी प्रेरित करता है कि हम अपने समाज में व्याप्त कुरीतियों और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाएँ और एक बेहतर समाज के निर्माण में योगदान दें। अंततः, इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा पर अध्ययन का महत्त्व इस बात में निहित है कि यह हमें वर्तमान समय की जटिलताओं को समझने और उनके समाधान की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करता है। यह अध्ययन हमें यह सिखाता है कि राष्ट्र केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं है, बल्कि यह एक जीवंत सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। राष्ट्रीयता को भी एक जिम्मेदारी के रूप में समझते हुए हमें अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए और समाज के विकास में योगदान देना चाहिए। इस प्रकार यह अध्ययन न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो हमें एक अधिक समावेशी, न्यायपूर्ण और मानवीय समाज की स्थापना की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

[10] पांडेय, पूजा (2020) – इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक अस्मिता, पटना विश्वविद्यालय

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

उद्देश्य

- **इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र की बदलती अवधारणा का अध्ययन करना। राष्ट्रीयता के स्वरूप में आए परिवर्तनों का विश्लेषण करना।**
- **साहित्य में सामाजिक समावेशन और विविधता की भूमिका को समझना।**
- **वैश्वीकरण के प्रभावों का राष्ट्र और राष्ट्रीयता पर अध्ययन करना।**
- **समकालीन हिंदी साहित्य में लोकतांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति का विश्लेषण करना।**

परिकल्पनाएँ

- **इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र की अवधारणा अधिक समावेशी और बहुआयामी हो गई है।**
- **राष्ट्रीयता अब केवल भावनात्मक न होकर आलोचनात्मक और जिम्मेदार दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुई है।**
- **वैश्वीकरण ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं को व्यापक और जटिल बनाया है।**

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र की अवधारणा अधिक समावेशी और बहुआयामी हो गई है।

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र की अवधारणा के समावेशी और बहुआयामी होने की परिकल्पना स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है। पहले राष्ट्र को मुख्यतः एक राजनीतिक और भौगोलिक इकाई के रूप में देखा जाता था, जिसमें सांस्कृतिक विविधताओं को सीमित स्थान दिया जाता था। किन्तु समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्र की परिभाषा का विस्तार हुआ है, जिसमें समाज के विभिन्न वर्गों, जातियों, भाषाओं और संस्कृतियों की सक्रिय भागीदारी को स्वीकार किया गया है। दलित, स्त्री और आदिवासी साहित्य के उभार ने इस परिवर्तन को और स्पष्ट किया है। इन साहित्यिक धाराओं ने यह दिखाया कि राष्ट्र केवल प्रभुत्वशाली वर्गों का प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि उसमें हाशिए पर खड़े लोगों की भी समान भागीदारी होनी चाहिए। समकालीन लेखकों ने राष्ट्र को एक ऐसी संरचना के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें विविधता को कमजोरी नहीं, बल्कि शक्ति के रूप में देखा जाता है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्र को एक जीवंत और गतिशील प्रक्रिया के रूप में भी समझा गया है। इसमें सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा जैसे मूल्यों को विशेष महत्व दिया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्र की अवधारणा को अधिक व्यापक, समावेशी और यथार्थवादी रूप में प्रस्तुत करता है, जिससे यह परिकल्पना प्रमाणित होती है।

राष्ट्रीयता अब केवल भावनात्मक न होकर आलोचनात्मक और जिम्मेदार दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुई है।

यह परिकल्पना कि राष्ट्रीयता अब केवल भावनात्मक न होकर आलोचनात्मक और जिम्मेदार दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुई है, समकालीन हिंदी साहित्य में पूर्णतः प्रमाणित होती है। पारंपरिक साहित्य में राष्ट्रीयता का स्वरूप मुख्यतः देशभक्ति, त्याग और गौरव की भावना तक सीमित था, जिसमें आलोचनात्मक दृष्टिकोण का अभाव था। किन्तु इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्रीयता को एक नए रूप में प्रस्तुत किया गया है। अब साहित्यकार राष्ट्रीयता को अंधभक्ति के रूप में स्वीकार नहीं करते, बल्कि उसमें मौजूद सामाजिक असमानताओं और अन्यायों को उजागर करते हैं। यह दृष्टिकोण राष्ट्रीयता को अधिक लोकतांत्रिक और नैतिक बनाता है। दलित, स्त्री और आदिवासी विमर्श ने इस परिवर्तन को और सशक्त किया है। इन विमर्शों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि सच्ची राष्ट्रीयता वही है, जो समाज के सभी वर्गों को समान अधिकार

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

और सम्मान प्रदान करे। साहित्य में यह भी दर्शाया गया है कि नागरिक का कर्तव्य केवल राष्ट्र से प्रेम करना नहीं, बल्कि उसके भीतर व्याप्त समस्याओं के समाधान के लिए प्रयास करना भी है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्रीयता को एक सक्रिय, जागरूक और जिम्मेदार अवधारणा के रूप में प्रस्तुत करता है, जिससे यह परिकल्पना सिद्ध होती है।

वैश्वीकरण ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं को व्यापक और जटिल बनाया है।

यह परिकल्पना कि वैश्वीकरण ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं को व्यापक और जटिल बनाया है, समकालीन हिंदी साहित्य में स्पष्ट रूप से प्रमाणित होती है। वैश्वीकरण के प्रभाव से दुनिया के विभिन्न देशों के बीच संपर्क और सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ा है, जिससे राष्ट्र की पारंपरिक सीमाएँ और पहचान प्रभावित हुई हैं। हिंदी साहित्य में इस परिवर्तन को गहराई से चित्रित किया गया है। लेखक यह दिखाते हैं कि वैश्वीकरण ने जहां एक ओर नई संभावनाएँ और अवसर प्रदान किए हैं, वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक अस्मिता और स्थानीय पहचान के सामने चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। बाजारवाद और उपभोक्तावाद के प्रभाव से सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन आया है, जिसे साहित्यकारों ने आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया है। समकालीन हिंदी साहित्य में एक संतुलित दृष्टिकोण देखने को मिलता है, जिसमें वैश्विकता को स्वीकार करते हुए स्थानीयता की रक्षा पर जोर दिया जाता है। प्रवासी साहित्य और अंतरराष्ट्रीय संदर्भों के माध्यम से राष्ट्र की अवधारणा को अधिक व्यापक बनाया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता को केवल सीमित दायरे में नहीं रखा, बल्कि उसे एक व्यापक और बहुआयामी रूप प्रदान किया है, जिससे यह परिकल्पना प्रमाणित होती है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से सामने आता है कि इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा ने अपने पारंपरिक स्वरूप से आगे बढ़कर एक व्यापक, समावेशी और बहुआयामी रूप ग्रहण कर लिया है। राष्ट्र अब केवल भौगोलिक सीमाओं, राजनीतिक सत्ता अथवा ऐतिहासिक गौरव का प्रतीक नहीं रह गया है, बल्कि यह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक विविधता, मानवीय मूल्यों और लोकतांत्रिक चेतना का समन्वित रूप बन चुका है। समकालीन हिंदी साहित्य ने इस परिवर्तन को अत्यंत संवेदनशील और यथार्थपरक ढंग से अभिव्यक्त किया है। दलित साहित्य, स्त्री विमर्श, आदिवासी साहित्य तथा हाशिए पर स्थित वर्गों की आवाजों ने राष्ट्र की अवधारणा को अधिक लोकतांत्रिक और समतामूलक बनाया है। इससे यह सिद्ध होता है कि राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी विविधता, बहुलता और समावेशी दृष्टिकोण में निहित है। साहित्यकारों ने यह स्पष्ट किया है कि राष्ट्र की पहचान केवल सत्ता या सीमाओं से नहीं, बल्कि उसके नागरिकों के जीवन, संघर्षों, आकांक्षाओं और सामाजिक संबंधों से निर्मित होती है। इसी प्रकार राष्ट्रीयता की अवधारणा भी भावनात्मक देशभक्ति से आगे बढ़कर एक जागरूक, आलोचनात्मक और उत्तरदायी दृष्टिकोण के रूप में विकसित हुई है। अब राष्ट्रीयता का अर्थ केवल राष्ट्र के प्रति निष्ठा व्यक्त करना नहीं, बल्कि उसके भीतर विद्यमान असमानताओं, अन्यायों और सामाजिक विषमताओं के प्रति सजग रहना भी है। हिंदी साहित्य ने यह स्थापित किया है कि सच्ची राष्ट्रीयता वही है, जो सभी वर्गों को समान अवसर, सम्मान और न्याय प्रदान करे। इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य राष्ट्र और राष्ट्रीयता को एक ऐसे जीवंत विमर्श के रूप में प्रस्तुत करता है, जो समय के साथ निरंतर विकसित होता रहता है और समाज की बदलती परिस्थितियों को अपने भीतर समाहित करता है।

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

दूसरे निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी में वैश्वीकरण, तकनीकी विकास और सामाजिक परिवर्तन ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणाओं को और अधिक जटिल, व्यापक तथा समकालीन बना दिया है। हिंदी साहित्य ने इन परिवर्तनों को केवल स्वीकार ही नहीं किया, बल्कि उनकी आलोचनात्मक समीक्षा भी प्रस्तुत की है। वैश्वीकरण के प्रभाव से सांस्कृतिक आदान-प्रदान, आर्थिक प्रतिस्पर्धा और संचार क्रांति ने राष्ट्र की पारंपरिक पहचान को चुनौती दी है, किंतु साथ ही साहित्य ने स्थानीय संस्कृति, भाषा और अस्मिता के संरक्षण की आवश्यकता पर भी बल दिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि समकालीन राष्ट्र की अवधारणा स्थानीयता और वैश्विकता के संतुलन पर आधारित है। साहित्यकारों ने यह दिखाया है कि आधुनिक समय में राष्ट्र की शक्ति उसकी सांस्कृतिक जड़ों और वैश्विक दृष्टि, दोनों के समन्वय में निहित है। इस अध्ययन से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी साहित्य केवल समाज का दर्पण नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना और राष्ट्रीय विचारधारा के निर्माण का सशक्त माध्यम भी है। यह नागरिकों में सामाजिक जिम्मेदारी, लोकतांत्रिक मूल्यों और नैतिक चेतना का विकास करता है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता की अवधारणा को साहित्य ने इस प्रकार पुनर्परिभाषित किया है कि वह केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि बौद्धिक, सामाजिक और मानवीय आधार पर भी स्थापित हो सके। अतः समग्र रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य राष्ट्र और राष्ट्रीयता को एक समावेशी, मानवीय, प्रगतिशील और आलोचनात्मक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है, जो वर्तमान समय की जटिलताओं को समझने और भविष्य के लिए एक अधिक न्यायपूर्ण, समतामूलक तथा लोकतांत्रिक समाज की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संदर्भ-सूची

- सिंह, अंजली (2019) – *समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रवाद का स्वरूप*, दिल्ली विश्वविद्यालय
- कुमार, पंकज (2018) – *हिंदी कथा साहित्य में राष्ट्रीयता का बदलता स्वरूप*, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
- वर्मा, रीना (2020) – *इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में राष्ट्र और अस्मिता*, लखनऊ विश्वविद्यालय
- यादव, संदीप (2017) – *समकालीन हिंदी कविता में राष्ट्रीय चेतना*, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय
- मिश्रा, रेखा (2021) – *हिंदी साहित्य में वैश्वीकरण और राष्ट्रीयता*, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
- चौधरी, नेहा (2019) – *दलित साहित्य और राष्ट्र की अवधारणा*, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
- तिवारी, अमन (2016) – *हिंदी कहानी में सामाजिक समावेशन और राष्ट्रवाद*, गोरखपुर विश्वविद्यालय
- गुप्ता, कविता (2022) – *समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री और राष्ट्रवाद*, राजस्थान विश्वविद्यालय
- श्रीवास्तव, दीपक (2018) – *हिंदी उपन्यासों में राष्ट्र की पुनर्परिभाषा*, सागर विश्वविद्यालय
- पांडेय, पूजा (2020) – *इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक अस्मिता*, पटना विश्वविद्यालय
- शुक्ल, अरुण (2017) – *हिंदी कविता में राष्ट्रवाद और जनचेतना*, कानपुर विश्वविद्यालय
- भारती, सविता (2021) – *आदिवासी साहित्य और राष्ट्रीय विमर्श*, रांची विश्वविद्यालय
- सिंह, रोहित (2019) – *हिंदी साहित्य में लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास*, दिल्ली विश्वविद्यालय
- कुमारी, रश्मि (2018) – *समकालीन हिंदी कहानी और राष्ट्र की अवधारणा*, मगध विश्वविद्यालय
- द्विवेदी, नीलम (2022) – *हिंदी साहित्य में वैश्विकता और स्थानीयता*, हैदराबाद विश्वविद्यालय
- शर्मा, आर. (2019) – "समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रवाद का पुनर्पाठ", *हिंदी साहित्य शोध पत्रिका*, साहित्य अकादेमी
- वर्मा, पी. (2020) – "राष्ट्रीयता और वैश्वीकरण: हिंदी साहित्य का दृष्टिकोण", *भारतीय भाषा पत्रिका*, भारतीय भाषा परिषद

Nrityanjali Multidisciplinary International Research Journal

Volume 2, Issue 1, January -March 2026

E-ISSN: 3108-1452

NMIRJ Website: https://nrityanjaliresearchjournal.com/home/ Email: info@nrityanjaliresearchjournal.com

- सिंह, एम. (2018) – “हिंदी उपन्यासों में राष्ट्र की बदलती छवि”, *आलोचना*, राजकमल प्रकाशन
- यादव, के. (2021) – “दलित विमर्श और राष्ट्रवाद”, *समकालीन भारतीय साहित्य*, साहित्य अकादेमी
- मिश्रा, एस. (2017) – “स्त्री लेखन और राष्ट्रीय पहचान”, *हंस पत्रिका*, हंस प्रकाशन
- गुप्ता, डी. (2022) – “वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य”, *परिकथा*, परिकथा प्रकाशन
- तिवारी, वी. (2019) – “राष्ट्रवाद और समकालीन कविता”, *नया ज्ञानोदय*, भारतीय ज्ञानपीठ
- चौधरी, एस. (2020) – “आदिवासी विमर्श और राष्ट्रीयता”, *पूर्वग्रह*, राजकमल प्रकाशन
- पांडेय, आर. (2018) – “हिंदी कहानी में राष्ट्र की अवधारणा”, *तद्भव*, तद्भव प्रकाशन
- शुक्ल, पी. (2021) – “लोकतंत्र और साहित्य”, *आलोचना*, राजकमल प्रकाशन
- श्रीवास्तव, एल. (2019) – “राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक अस्मिता”, *भारतीय साहित्य समीक्षा*, साहित्य अकादेमी
- द्विवेदी, ए. (2020) – “हिंदी साहित्य में बदलता राष्ट्रवाद”, *हिंदी अनुशीलन*, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
- कुमारी, एस. (2022) – “समकालीन विमर्श और राष्ट्र”, *शोध प्रभा*, पटना विश्वविद्यालय
- भारती, आर. (2018) – “हिंदी साहित्य में समावेशन की प्रवृत्ति”, *जनपद*, जनपद प्रकाशन
- सिंह, वी. (2021) – “राष्ट्र और साहित्य का संबंध”, *साहित्य विचार*, दिल्ली विश्वविद्यालय